|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 10: विभूतियोग

3/3 (श्लोक 26-42), शनिवार, 21 दिसंबर 2024

विवेचक: गीता विशारद डॉ आशू जी गोयल

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/Ptv3NRVjba8

दैवीय विभूतियों की पहचान, ईश्वर का कण कण में भान

सुमधुर प्रार्थना, श्रीहनुमान चालीसा पाठ, दीप प्रज्वलन और ईश्वर वन्दना के साथ आज के विवेचन सत्र का शुभारम्भ हुआ।

श्रीभगवान की अतिशय मङ्गलमय कृपा से हम सबका ऐसा सद्भाग्य जागृत हुआ कि हम अपने इस मानव जीवन को सार्थक बनाने के लिए, उसको परमोत्कर्ष पर पहुँचाने के लिए और इस मानव जीवन का परमोच्च लक्ष्य प्राप्त करने के लिए श्रीमद्भगवद्गीता का सान्निध्य प्राप्त करने के लिए अग्रसर हो गए हैं। हम श्रीमद्भगवद्गीता का उच्चारण सीखने में, उसका अर्थ समझने में, विवेचन से जुड़कर उसके सूत्रों को समझने में और उन सूत्रों का सदुपयोग अपने जीवन में करने के लिए प्रयासरत हैं।

यहाँ, यह समझना भी आवश्यक है कि श्रीमद्भगवद्गीता को पूर्णतः प्राप्त करने के लिए उसमें बताये सूत्रों को कुछ-कुछ मात्रा में अपने जीवन में उतारना भी नितान्त आवश्यक है। हमारे सभी प्रयास निष्फल हो जाते हैं या अपेक्षित फल नहीं प्रदान करते, यदि हम अपने व्यवहार को परिवर्तित न कर पायें।

श्रीभगवान ने पन्द्रहवें अध्याय में कहा -

यतन्तो योगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम् |
यतन्तोऽप्यकृतात्मानो नैनं पश्यन्त्यचेतसः ||15.11||

अकृतात्मानो - जब तक अन्तःकरण की शुद्धि नहीं हुई तब तक प्रचण्ड योगियों को भी ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती तो हम जैसे साधारण मनुष्यों के क्षणिक प्रयत्नों को अत्यधिक पुरुषार्थ समझ बैठना हमारी अज्ञानता दर्शाती है। हम इस सांसारिक जीवन के भोगों से इतने ग्रसित हैं कि यदि एक दो घण्टे श्रीमद्भगवद्गीता के पाठ या ईश्वर का स्मरण, माला जाप कर लें तो उसे बड़ी उपलब्धि मानने की भूल कर बैठते हैं।

इसके विपरीत यदि हम अन्तःकरण की शुद्धि पर विशेष ध्यान दें और श्रीमद्भगवद्गीता से प्राप्त अनमोल सीख को अपने जीवन में उतारने का प्रयास करें तो वह अति श्रेयस्कर रहेगा। उदाहरण के लिए यदि हम प्रण ले लें कि किसी भी परिस्थिति में असत्य का आलम्बन नहीं लेंगे, इस निर्णय के दुष्कर परिणामों का सामना भी करना पड़ सकता है। व्यापार में घाटा, समाज में निन्दा

इत्यादि अनेक बाधाओं को झेलना पड़ सकता है।

अन्य सदाचरण जैसे सबसे प्रेमपूर्वक व्यवहार करना, किसी का अहित न चाहना, अपने जीवन को दूसरों के हित के लिए व्यतीत करना, इत्यादि अपनाकर हम अपने जीवन को नूतन आयाम प्रदान कर सकते हैं।

वर्तमान समाज में हमारी मानसिकता इससे विरुद्ध होती जा रही है। प्रायः लोगों के मन में यह भाव रहता है कि दूसरे लोग स्वार्थ हेतु हमारा उपयोग कर जाते हैं। यदि हम इस स्थिति में अपना दृष्टिकोण बदल दें और समझें कि श्रीभगवान की अतिशय कृपा के कारण ही हम इतने सक्षम हो पाए हैं कि अन्य जीव की निष्काम, निःस्वार्थ भाव से सहायता कर पाये। परसेवा को व्यावसायिक रूप में ढालना, उससे उत्पन्न लाभ-हानि पर ध्यान केन्द्रित रखना, उसके वास्तविक प्रयोजन के विमुख है। यदि हम सेवा को लाभ-हानि के मापदण्ड में आँकने लगते हैं तो उसके स्वरूप को क्षति पहुँचाते हैं। हमारा मनोभाव तो यह होना चाहिए कि हम अनेकानेक जन की सहायता कर पायें। अन्तःकरण की शुद्धि से ही मन में ऐसे उत्तम विचार उत्पन्न होते हैं।

श्रीभगवान ने बारहवें अध्याय में कहा -

सर्वभूतहिते रताः।।12.4।।

मेरा जीवन संसार के सभी प्राणियों के लिए उपयोगी एवम् कल्याणकारी हो, ऐसी भावना सदैव मन में विद्यमान रहे, ऐसी प्रार्थना करनी चाहिए।
अपने परिवार के साथ-साथ जिस किसी के भी सम्पर्क में हम आयें, सभी के लिए कल्याणकारी ही सिद्ध हों।

पेड़-पौधे, पशु-पक्षी और अन्य जीव जन्तुओं की सुरक्षा हेतु प्रयास करना भी हमारा कर्त्तव्य है। अपने चहुँ ओर स्वच्छता व आत्मीयता का वातावरण निर्माण करना, समाज के प्रति अपने दायित्त्वों का पालन करना, ऐसी सकारात्मक सोच रखना अत्यन्त पुण्यवर्धक है। ऐसा करने से ही ईश्वर कथित सर्वभूतहिते रताः की भावना को चरितार्थ कर पायेंगे।

श्रीमद्भगवद्गीता को जीवन में उतारते हुए, अपनी जीवन यात्रा पार करते हुए, अनेकानेक विषयों पर हम अपनी विचार धारा को नयी दिशा प्रदान करते जायेंगे और तब यह अनुभूत करेंगे कि ईश्वर कृपा से प्राप्त धन, समृद्धि की पूर्णता भी औरों के कल्याण के लिए ही है।

दसवें अध्याय में श्रीभगवान ने विभूतियों का वर्णन किया है, जिनको गूढ़ता से समझना होगा।

दृष्टि के दो प्रकार हैं - व्यवहार दृष्टि और तत्त्व दृष्टि। तत्त्व दर्शी को भी व्यव्हार दृष्टि ग्रहण करनी पड़ती है पर तत्त्व दृष्टि सब को सुलभ नहीं।
श्रीभगवान ने चौथे अध्याय में कहा - केवल ज्ञानी जन को ही तत्त्व दृष्टि प्राप्त है।

ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ||4.34||

इस तथ्य को उदाहरण से समझते हैं। मान लीजिये कि हमारे पास एक लोहे की थाल और एक लोहे से बना वॉश बेसिन (wash basin) है। तत्त्व दृष्टि से ये दोनों समान हैं क्योंकि एक ही धातु से निर्मित्त हैं परन्तु व्यवहार दृष्टि से दोनों की उपयोगिता पृथक है।

हमें यदि कोई फल धो कर परोसना है तो उसे बेसिन में धोकर थाल में परोसेंगे, यही व्यवहार दृष्टि से उचित रहेगा। इसी प्रकार सोने के आभूषण क्रय यानि खरीदते समय व्यवहार दृष्टि से आँके जाते हैं, उनके रूप रङ्ग से उनका चयन किया जाता है परन्तु विक्रय के समय केवल तत्त्व दृष्टि से उनका मूल्याङ्कन होता है।

श्रीभगवान इस अध्याय में अपने स्वरूप का वर्णन करते हुए बतलाते हैं कि वे कहाँ-कहाँ प्रमुख रूप में विद्यमान हैं। जैसे वायु में ऑक्सीजन और हाइड्रोजन दोनों समाहित हैं परन्तु व्यवहार की दृष्टि से वे पानी का रूप नहीं हैं। साँस लेने पर हमारी प्यास शान्त नहीं होती जबकि पानी भी इन्ही दोनों पदार्थों से निर्मित्त है। अग्नि की उत्पत्ति दो पत्थरों के या दियासलाई के घर्षण से ही

सम्भव है। पत्थर या दियासलाई में अग्नि का वास नहीं पर इनके माध्यम से अग्नि प्रकट होती है।

उसी प्रकार सभी नदियों में श्रीभगवान हैं पर गङ्गाजी में वे प्रत्यक्ष प्रकट हैं। यही विभूति है।

मानस के उत्तरकाण्ड में भगवान राम अयोध्यावासियों को कहते हैं-

संसार के सब भूत प्राणी मुझे अत्यन्त प्रिय हैं, सब मेरे से ही उपजे हैं।

सब मम प्रिय सब मम उपजाए।

सुन्दरकाण्ड में हनुमानजी को भगवान राम कहते हैं -

तुम मम प्रिय भरतहि सम भाई।

भगवान राम यहाँ भरत को विभूति का अस्तित्व प्रदान करते हैं। भरत के प्रति उनका प्रेम विशिष्ट है और प्रकट रूप में उजागर है।

इसी प्रकार श्रीभगवान अपनी अन्य विभूतियों का वर्णन इस अध्याय में करते हैं।

10.26, 10.27, 10.28

अश्वत्थः(स्) सर्ववृक्षाणां(न्),देवर्षीणां(ञ्) च नारदः।
गन्धर्वाणां(ञ्) चित्ररथः(स्), सिद्धानां(ङ्) कपिलो मुनिः॥10.26॥
उच्चैःश्रवसमश्वानां(म्),विद्धि माममृतोद्भवम्।
ऐरावतं(ङ्) गजेन्द्राणां(न्), नराणां(ञ्) च नराधिपम्॥10.27॥
आयुधानामहं(म्) वज्रं(न्), धेनूनामस्मि कामधुक्।
प्रजनश्चास्मि कन्दर्पः(स्), सर्पाणामस्मि वासुकिः॥10.28॥

सम्पूर्ण वृक्षों में पीपल, देवर्षियों में नारद, गन्धर्वों में चित्ररथ और सिद्धों में कपिल मुनि (मैं हूँ)।
घोड़ों में अमृत के साथ समुद्र से प्रकट होने वाले उच्चैःश्रवा नामक घोड़े को, श्रेष्ठ हाथियों में ऐरावत नामक हाथी को और मनुष्यों में राजा को मेरी विभूति मानो।
आयुधों में वज्र (और) धेनुओं में कामधेनु मैं हूँ। सन्तान-उत्पत्ति का हेतु कामदेव मैं हूँ और सर्पों में वासुकि मैं हूँ।

विवेचन-
आयुधानमाहं वज्रं - अस्त्र एवम् शस्त्र दो प्रकार के आयुध हैं। अस्त्र का प्रयोग दूर से प्रहार करने के लिए किया जाता है और शस्त्र का निकट से वार के लिए। भाला, बाण अस्त्र हैं और तलवार, गदा शस्त्र हैं जो हाथ में लेकर लड़े जाते हैं।

श्रीभगवान कहते हैं कि आयुधों में वे वज्र हैं।
वज्र की दो विशेषताएँ हैं। यह महर्षि दधीचि की अस्थियों से बना है और इसे देवराज इन्द्र धारण करते हैं। महर्षि दधीचि ने लोक कल्याण के लिए अपना जीवित शरीर दान किया और उनकी महान काया से इस महान वज्र का निर्माण हुआ, जिससे वृतासुर का वध हुआ।

धेनुनामस्मि कामधुक - गौओं में श्रीभगवान कामधेनु में प्रकट हैं। कामधेनु गाय सभी प्रकार की कामनाओं को पूर्ण करती है। कामधेनु की पुत्री नन्दिनी का वर्णन विश्वामित्र मुनि के पूर्व जन्म में है जो राजा कौशिक के नाम से था। हमारे पूरे वाङ्मय में यह कथा एक अद्भुत प्रकरण है।

अत्यन्त धर्मशील, क्षत्रिय राजा कौशिक युद्ध में विजयी होकर अपने राज्य की ओर जा रहे थे। मार्ग में वशिष्ठ मुनि का आश्रम आया। मुनि महाराज को प्रणाम करने राजा उनके आश्रम में पधारे। मुनि श्रेष्ठ ने उनसे वहीं विश्राम करने का आग्रह किया। राजा इस प्रस्ताव को मानने में सङ्कोच करते हैं क्योंकि उनके साथ लाखों की सङ्ख्या में सैनिक थे और वे सभी युद्ध के उपरान्त थके हुए थे। उन सबके भोजन और विश्राम का किस प्रकार आश्रम में प्रबन्ध हो पायेगा वे इस पर विचार कर रहे थे।
वशिष्ठ मुनि ने उन्हें आश्वस्त करते हुए कहा कि वे सभी सैनिकों के भोजन और विश्राम का आयोजन कर देंगें। राजा को विश्वास नहीं हो रहा था, तब मुनि श्रेष्ठ ने मुस्कुराते हुए उन्हें ब्रह्म ऋषि के प्रताप का भान करवाया।

वशिष्ठ मुनि की एक दृष्टि पड़ते ही नन्दिनी गाय तुरन्त उन सभी सैनिकों के लिए अति उत्तम स्वादिष्ट भोजन एवम् विश्राम का प्रबन्ध करवा देती है। यह सब देख राजा कौशिक अचम्भे में आ जाता है। अपने क्षत्रित्व पर उन्हें गर्व था परन्तु वशिष्ठ ऋषि के प्रताप का जब उन्हें आभास हुआ तो उनके मन में वासना जागृत हुई। अब वे मुनि श्रेष्ठ से वह इच्छापूर्ति गाय अपने लिए चाहते हैं। वशिष्ठ मुनि राजा को चेतावनी देते हैं कि वे अब लोभ न करें। उनकी दयनीय अवस्था देखकर मुनि ने उन पर कृपा की और उसके प्रतिफल में राजा की लोभ वासना निन्दनीय है।

राजा अपने अहङ्कार वश अपने धर्म से विमुख हो बैठा और ऋषि पर अपने बल का प्रदर्शन करते हुए गाय पर अपना अधिकार जताने लगा। ब्राह्मण राजा के इस व्यवहार से क्रोधित हो उठते हैं और उसे सचेत करते हैं कि ब्राह्मण के धन पर किसी राजा का अधिकार नहीं होता। वे राजन को आश्रम से तुरन्त निकलने का आदेश देते हैं। राजा कौशिक ऋषि मुनि के तेज से अनभिज्ञ था। वह मुनि श्रेष्ठ की चेतावनी की अवज्ञा करने लगा। अब वह नन्दिनी को बलपूर्वक आश्रम से ले जाना चाहता था। जैसे ही उसके सैनिक गाय की ओर बढ़े, मुनि श्रेष्ठ के एक सङ्केत से नन्दिनी के नथुनों की हुँकार और उसके पाद के हिलने से घनघोर सेना प्रकट हो गयी। जिसने राजा कौशिक की समस्त सेना विध्वंस कर दी।

राजा अपनी पराजय सहन नहीं कर पाया और एक ऋषि द्वारा परास्त होने पर अब वह अपने क्षत्रित्त्व को त्याग ब्राह्मणत्व को प्राप्त करने के लिए घोर तपस्या करने लगा। हज़ारों वर्ष की भीषण तपस्या के फल स्वरुप ब्रह्मा जी से ब्राह्मणत्व की माँग करता है ताकि वह वशिष्ठ मुनि जितना तेजस्वी ऋषि बन पाये। ब्रह्मा जी उसे समझाते हैं कि इस तपस्या के फलस्वरूप वह केवल ब्राह्मणत्व को प्राप्त कर पाया है। ब्राह्मण से ऋषि, ऋषि से महर्षि, महर्षि से ब्रह्मऋषि की यात्रा अभी शेष है और वहाँ तक पहुँचने के लिए यथा मात्रा में पुण्य सञ्चित करना पड़ेगा।

राजा पुनः तपस्या में लीन हो जाता है और अपनी अति घोर तपस्या के उपरान्त एक जन्म में ही ब्रह्मर्षि विश्वामित्र बन जाता है।

हमारे कल्प में केवल दो ब्रह्मर्षियों का वर्णन है - वशिष्ठ मुनि एवम् विश्वामित्र मुनि।

10.29

अनन्तश्चास्मि नागानां(म्), वरुणो यादसामहम्।
पितृणामर्यमा चास्मि, यमः(स्) संयमतामहम्॥10.29॥

नागों में अनन्त (शेषनाग) और जल-जन्तुओं का अधिपति वरुण मैं हूँ। पितरों में अर्यमा और शासन करने वालों में यमराज मैं हूँ।

विवेचन- शेषनाग के अवतार लक्ष्मणजी, बलरामजी हुए हैं और उनकी एवम् वरुण देव की कथा से अधिकतर साधक परिचित हैं।

यहाँ विशेषकर जानने योग्य पितरों के आराध्य अर्यमा की कथा है। पित्र लोक के चार मुख्य देवता हैं - काव्यवाडनल, अनल, सोम और अर्यमा।
जब हम अपने पितरों के लिए तर्पण करते हैं, पिण्ड देते हैं अथवा श्राद्ध करते हैं तो हम ब्राह्मणों या कौवे या गाय को भोजन अर्पण करते हैं।

इनके निमित्त से हमारे पितरों तक वह भोज कैसे पहुँचेगा इसकी जिज्ञासा हमारे मन में रहती है।

अर्यमा देवता को श्रीभगवान ने इस कार्य का भार सौंपा है। हमारे पितरों को, जो किसी भी योनि में हों, हमारे द्वारा अर्पित दान पहुँचाने का विशिष्ट काज अर्यमा देवता करते हैं।

अगर पितर पशु योनि में हैं तो माँस के रूप में उन तक पहुँचेगा, देवता योनि में होंगे तो हविष्य के रूप में और मनुष्य योनि में हैं तो भोजन के रूप में उन तक पहुँचेगा। चन्द्रमा के ऊर्ध्व भाग में पितर लोक स्थित है।
मनुष्य लोक के तीस दिन की तुलना में पितरों का एक दिन होता है और हमारे छः मास देवताओं का एक दिन।

10.30

प्रह्लादश्चास्मि दैत्यानां(ङ्), कालः(ख्) कलयतामहम्।
मृगाणां(ञ्) च मृगेन्द्रोऽहं(म्), वैनतेयश्च पक्षिणाम्॥10.30॥

दैत्यों में प्रह्लाद और गणना करने वालों (ज्योतिषियों) में काल मैं हूँ तथा पशुओं में सिंह और पक्षियों में गरुड मैं हूँ।

विवेचन- प्रह्लाद दैत्य वंश में जन्म पाकर भी देव भक्ति प्राप्त करते हैं, यह श्रीभगवान की विभूति है।

ज्योतिष जब **काल**, नक्षत्रों की गणना करते हैं तब क्षण, वार इत्यादि का अवलोकन करते हैं। **इन सब में समय श्रीभगवान स्वयम् हैं।**

मृग शब्द से तात्पर्य केवल हिरण नहीं है, अपितु चार पैर वाले सभी प्राणियों को मृग कहा जाता है।

मृगों के इन्द्र सिंह हैं और पक्षियों के **गरुड़**। गरुड़ की सबसे सूक्ष्म दृष्टि होती है, वह सबसे ऊँचा उड़ सकता है और पक्षियों में सबसे शक्तिशाली है।

10.31

पवनः(फ्) पवतामस्मि, रामः(श्) शस्त्रभृतामहम्।
झषाणां(म्) मकरश्चास्मि, स्रोतसामस्मि जाह्नवी॥10.31॥

पवित्र करने वालों में वायु (और) शास्त्रधारियों में राम मैं हूँ। जल-जन्तुओं में मगर मैं हूँ। बहने वाले स्त्रोतों में गंगाजी मैं हूँ।

विवेचन- **पवनः पवतामस्मि** - जब हम किसी पात्र को जल से धोते हैं तो केवल उसके झूठेपन को निकालते हैं। वह पात्र वायु से सूखने पर ही पवित्र होता है। गीले बर्तन का उपयोग निषेध है। जब तक वह वायु से या कपड़े से पोंछ कर सुखाया न जाये, उसे उपयोग में नहीं लेते। जल अथवा मिट्टी से शुद्धि होती है, वायु से पवित्रता आती है। इसके कई विधान उल्लेखित हैं।

सोने के पात्र को जल से धोने की आवश्यकता नहीं। वह वायु द्वारा सूखने मात्र से ही पवित्र हो जाता है।

रजत का पात्र जल से धोने और वायु से सूखने पर पवित्र हो जाता है।
अन्य धातुओं के पात्र मिट्टी, राख अथवा साबुन से माञ्ज कर धोने और वायु से सूखने के पश्चात् ही उपयोग में लाये जा सकते हैं।

रामः शस्त्रभृतामहम् - शस्त्र धारियों में राम श्रीभगवान हैं। केवल श्रीराम के पास ही ऐसा शस्त्र है जो वार के बाद लौट आता है।

गङ्गाजी के उद्गम स्थल से बँगाल की खाड़ी तक गङ्गाजी की लम्बाई पच्चीस सौ पच्चीस किलोमीटर है। गङ्गोत्तरी से ऋषिकेश

तक गङ्गाजी पहाड़ों में हैं और इसमें चौदह स्थानों पर वे प्रकट हुईं हैं, जिन्हें चौदह प्रयाग कहा गया।

विष्णुप्रयाग, नन्दप्रयाग, कर्णप्रयाग, रुद्रप्रयाग, देवप्रयाग, सोमप्रयाग इत्यादि। इन सभी प्रयागों में स्नान करने का विशेष पुण्य है।

गङ्गाजी जब मैदानों से निकलीं तो तीन तीर्थ बने - हरिद्वार, प्रयाग और गङ्गासागर। इन तीनों स्थलों पर गङ्गास्नान का विशेष महत्त्व है।

चौदह जनवरी दो हजार पच्चीस में प्रयागराज में महाकुम्भ प्रारम्भ है। यह विश्व में सबसे विशाल जन एकत्रिकरण दिवस है।

परम पूज्य स्वामी गोविन्द देव गिरि जी महाराज ने आज प्रातः इण्डिया टीवी पर साक्षात्कार में एक विशेष प्रसङ्ग का विवरण दिया। कई वर्ष पूर्व माननीय मदन मोहन मालवीय जी से एक अमरीकी पत्रकार ने कुम्भ में एकत्रित जन मानस के विशाल समूह को देख अपना आश्चर्य व्यक्त किया और उनसे इसके प्रबन्ध में प्रश्न पूछे। वह पत्रकार यह जानने को उत्सुक था कि इतनी अपार सङ्ख्या में जन मानस को एकत्रित करने के लिए किस प्रकार का प्रचार किया जाता है। इसके उत्तर में मदन मोहन जी ने उसे उस दिन के पञ्चाङ्ग का एक पर्चा अपनी जेब से निकाल कर, तिथि के समक्ष लिखित मौनी अमावस्या की ओर सङ्केत किया। उन्होंने कहा कि केवल इस दिन का महत्त्व पढ़ते ही इतना विशालकाय जन समूह इस पुण्य फल को प्राप्त करने यहाँ एकत्रित हो उठता है।

यह परम्परा नवीन नहीं है, अपितु हज़ारों वर्षों से पीढ़ी दर पीढ़ी चली आने वाली हमारी संस्कृति है। हरिद्वार, प्रयाग और गङ्गा सागर में गङ्गाजी में स्नान का विशेष पुण्य है।

10.32

सर्गाणामादिरन्तश्च,मध्यं(ञ्) चैवाहमर्जुन।
अध्यात्मविद्या विद्यानां(म्), वादः(फ्) प्रवदतामहम्॥10.32॥

हे अर्जुन ! सम्पूर्ण सृष्टियो के आदि, मध्य तथा अन्त में मैं ही हूँ। विद्याओं में अध्यात्मविद्या (ब्रह्म विद्या) और परस्पर शास्त्रार्थ करने वालों का(तत्त्व-निर्णय के लिये किया जाने वाला) वाद मैं हूँ।

विवेचन- सृष्टि के आदि, मध्य एवम् अन्त को जानने का प्रयास करते हैं। श्रीमद्भगवद्गीता की मौलिकता को जानने के लिए बुद्धि को सूक्ष्म कर इसमें छिपे गूढ़ रहस्यों को पहचानना होगा। सृष्टि का आदि, मध्य एवम् अन्त कैसे हो सकता है जब श्रीभगवान ने स्वयम् कहा है -

नान्तो न चादिर्न च संप्रतिष्ठा।15.3।।

जिस सृष्टि का न अन्त है, न आदि है तो मध्य कैसे हो सकता है?

सन्तों के अनुसार पहला भाव इसमें **सृष्टि के आकार** का है।

एक प्रसङ्ग- हरियाणा के एक गाँव के जाटों का है। उनमें विवाद छिड़ गया कि पृथ्वी का मध्य कहाँ है। एक प्रधान जाट ने कहा, जो पृथ्वी का मध्य स्पष्ट करेगा, मेरा गन्ना उसका। एक जाट ने यह सुनते ही अपनी लाठी मिट्टी में गाड़ दी और बोला यह ही पृथ्वी का मध्य है। इसकी पुष्टि के लिए पाठशाला के मास्टरजी को बुलाया गया। गाँव में सबसे पढ़ा लिखा तो अध्यापक को ही समझा जाता है। मास्टर जी से जब पूछा गया कि कैसे जानें कि यही पृथ्वी का मध्य है? तो मास्टरजी ने कुछ विचार किया और कहा कि चूँकि पृथ्वी गोल है अतः पृथ्वी का मध्य तो मानना ही पड़ता है। जहाँ भी खूँटा गाड़ के मान लिया कि यह मध्य है तो वही मध्य बन जाता है।

विज्ञान और अध्यात्म का सृष्टि के विस्तार को लेकर एक ही मत है। वे भी मानते हैं कि सृष्टि अनन्त (infinite) है। सृष्टि के विषय में वेद भी **नेति-नेति** कहते हैं - जिसका कोई अन्त नहीं।

तिरानवे अरब (billion) प्रकाश वर्ष (light years) तक की खोज वैज्ञानिकों ने कर ली है। यदि हम मान लें कि छियालीस अरब एक तरफ और शेष छियालीस दूसरी ओर हैं। इस प्रकार व्यास में तिरानवे अरब को जान लिया तो पृथ्वी ब्रह्माण्ड के मध्य में स्थित है।

दूसरा भाव है, सृष्टियों के बनने बिगड़ने में **काल का भाव।** हमारे ग्रन्थों में आदिशक्ति दुर्गा का वर्णन आता है। आदिशक्ति, अर्थात् सर्व प्रथम शक्ति, यानि काल सम्बन्धित। हमारे कल्प में यह अवतार त्रेता युग में आया।

तीसरा भाव है **उत्पत्ति का**, सर्वप्रथम यह ब्रह्माण्ड कब बना?

विज्ञान के दृष्टिकोण से सृष्टि की उत्पत्ति Big bang theory (बिग बैंग थ्योरी) से हुई। भागवतजी में जायेंगे तो कल्प के अन्त में ब्रह्माण्ड पुनः रचा गया। महा तत्त्व से पञ्च तत्त्व, पाँच तत्त्व से पञ्च महाभूत इत्यादि।

श्रीभगवान अर्जुन से कहते है कि बनना, बिगड़ना, आदि-अन्त केवल समझ का विषय है। लघु रूप में आदि और अन्त की स्पष्टता रहती है, विस्तृत आकार में यह सम्भव ही नहीं। कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड हैं, करोड़ों सूर्य प्रतिदिन बनते हैं और विलुप्त होते हैं। **हर पल प्रलय और सृजन निरन्तर चल रहा है**।

सामान्य रूप से इस तथ्य को समझें तो एक कलम का आदि और अन्त उसकी निर्माण तिथि और स्याही के सूख जाने पर उसकी अन्त्येष्टि को माना जा सकता है। व्यवहार दृष्टि से हमें यह समझ में आएगा। गूढ़ता से समझें तो कलम का धातु तो संसार में सदैव विद्यमान था। न कोई वस्तु उत्पन्न होती है न ही समाप्त होती है, केवल उसका रूप परिवर्तन होता रहता है। पार्थिव शरीर जल जाने पर भी नष्ट नहीं होता, उसके पञ्च तत्त्व सृष्टि के पञ्च तत्त्वों में विलीन हो जाते हैं। प्राणियों के जन्म-मरण का प्रभाव पृथ्वी के भार को परिवर्तित नहीं करता।

एक तेजस्वी बालक समुद्र के किनारे खड़ा था और एक पात्र में समग्र समुद्र को समा पाने का उपाय बूझ रहा था। उसने शास्त्रों में यह पढ़ लिया था और स्वयं यह प्रमाण देखना चाहता था। एक सन्त महात्मा वहाँ से निकल रहे थे। बालक की सहायता हेतु वे उसके समीप गए। उसकी दुविधा को समझ, वे उससे बोले कि समुद्र को पात्र में भर देंगे पर फिर पात्र को रिक्त नहीं कर पायेंगे, पात्र वापिस नहीं मिलेगा। बालक यह सुन अति प्रसन्न हो गया और सन्त से विनती की, कि पात्र की आवश्यकता नहीं, केवल यह गुत्थी सुलझा दीजिये। सन्त ने पात्र को तीव्रता से घुमाकर दूर उछाल दिया। पात्र समुद्र के तल पर जा पहुँचा और समस्त सगर उस में समाहित हो गया, ऐसा दर्शन मिल गया।

यही भाव ईश्वर को समझने के लिए अनिवार्य है। हम अपनी सीमित बुद्धि से ईश्वर को यदि समझना चाहें तो क्या वह सम्भव है? **बुद्धि का विलय समुद्र में करना पड़ता है।**

जानत तुम्हहि तुम्हइ होइ जाई।

बुद्धि से परमात्मा को जाना नहीं जाता और एक बार परमात्मा को जान लिया तो पात्र स्वयं विलुप्त हो जाता है। पात्र समुद्र में जब तक डूबा नहीं, उसे अपने अन्दर समाहित न कर सका। हम सामान्य बुद्धि से काम करते हैं। अनन्त को समझने की चेष्टा नहीं करते। जन्म-मरण के व्यूह में जकड़े रहते हैं।

हम आकाशगङ्गाओं की चर्चा करते हैं, पर अनन्त आकाशगङ्गाओं की कल्पना भी नहीं कर सकते। अनन्त को समझने की क्षमता मानव बुद्धि में नहीं है। तत्त्वज्ञानी महात्मा अपनी बुद्धि को उसमें विलय कर उसको तत्त्व दृष्टि से समझ लेते हैं।

भीष्म पितामह शरशय्या पर लेटे हुए श्रीकृष्ण से अपने विवाह के लिए आग्रह करते हैं। उनके इस व्यवहार से सभी अचम्भित हैं।

सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य पूर्ण जीवन का निर्वाह कर अन्त समय भीष्म पितामह की यह अनोखी माँग किसी की समझ में नहीं आ रही थी। केशव वहाँ मुस्कुराते हुए खड़े थे, वे पितामह से विवाह का रहस्य प्रकट करने के लिए कहते हैं। तब पितामह बोले कि अपनी बुद्धि का विवाह आपके साथ करना चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ, आप मेरी बुद्धि हर लो, ताकि मैं आपको जान सकूँ। आपको एक हज़ार नामों से सिमर कर या लक्ष नामों से आपकी स्तुति कर भी मैं आपको नहीं जान पाऊँगा। आपको जानने के लिए स्वयं को खोना होगा।

जानत तुम्हहि तुम्हइ होइ जाई।
एको अहम् द्वितीयो नास्ति

एकत्त्व तब आएगा, जब मैं विलीन हो जाऊँ, बुद्धि के खेल-खिलवाड़ से तत्त्व ज्ञान कहाँ प्राप्त हो सकता है? वह असम्भव है। बुद्धि की कटोरी को ईश्वर में फ़ेंक दो, जैसे धातु की कटोरी को समुद्र में फेंका था, फिर केवल ईश्वर बचेगा और कोई नहीं।

हम अपनी बुद्धि को ईश्वर में स्थित कर सकते हैं , ईश्वर को बुद्धि में नहीं।

वादः प्रवदतामहम् - संवाद चार प्रकार के हैं।

1. जल्प - अपना मण्डन, दूसरे का खण्डन।

सुनि सुर बचन काल वत्स जाना
बिहसि वचन कर कृपा निधाना
सत्य सत्य सब तव प्रभुताई।
जल्पसि जनि देखाउ मनुसाई

श्रीराम ने रावण से कहा कि तुम जल्प करते हो, केवल अपना ही गुणगान कर रहे हो।

2. वितण्डा - दूसरे का खण्डन पर अपने मण्डन के लिए कुछ नही, जैसे विपक्ष की राजनीति। सत्तर वर्ष के शासन के उपरान्त काङ्ग्रेस पार्टी की उपलब्धियों की सूची नाम मात्र की है, परन्तु वर्तमान प्रधान मन्त्री मोदी जी के विरोध में बोलने का कोई अवसर वे नहीं त्यागते।

3. वाद - दोनों पक्ष अपना तर्क रखेंगे, जिसका तर्क विजयी रहा वही विद्वान माना जायेगा। इस वाद में ईश्वर का वास है।

4. विवाद - पहले से निश्चित है कि दूसरे का पक्ष अस्वीकार्य है। मैं सही हूँ, केवल इतना मान्य है।

10.33

अक्षराणामकारोऽस्मि, द्वन्द्वः(स्) सामासिकस्य च।
अहमेवाक्षयः(ख्) कालो, धाताहं(म्) विश्वतोमुखः॥10.33॥

अक्षरों में अकार और समासों में द्वन्द्व समास मैं हूँ। अक्षय काल अर्थात् काल का भी महाकाल (तथा) सब ओर मुख वाला धाता (सबका पालन-पोषण करने वाला भी) मैं ही हूँ।

विवेचन -अक्षरों में ऊँकार श्रीभगवान हैं। जब वाणी नहीं थी, लिपि नहीं थी तब भी ऊँकार था। शिवजी के डमरू से सारे वर्ण बने क, ख, ग, घ, इत्यादि निकले, ऊँकार इन सबसे पहले भी था और उसके बाद भी रहेगा।

द्वन्द्व समास में ईश्वर है। समास चार प्रकार के होते हैं -

1. अव्ययी भाव समास - जिसमें प्रथम पद प्रधान होता है, दूसरे का महत्त्व न हो - यथाशक्ति, प्रतिक्षण, बेशर्म।
2. तत्पुरुष समास - जिसमें द्वितीय पद प्रधान होता है - अकाल पीड़ित, आराम कुर्सी।
3. बहुब्रीहि समास - इसमें दोनों पदों की प्रधानता नहीं होती, वे किसी अन्य के द्योतक होते हैं। दशानन - दश आनन हैं जिसके अर्थात् रावण, दिगम्बर - जो वस्त्र न धारण करे अर्थात् जैन मुनि, धनञ्जय - अर्थात् अर्जुन।
4. द्वन्द्व समास - इसमें दोनों पद प्रधान होते हैं - सुख-दुःख, राजा-रङ्क, अन्न-जल।

श्रीभगवान ने श्रीमद्भगवद्गीता में द्वन्द्वातीत होने के लिए कहा है।

श्रीभगवान कहते हैं कि वे काल में हैं और मृत्यु में भी हैं। मृत्यु का उल्लङ्घन कोई नहीं कर पाया। लाखों वर्ष तपस्या के उपरान्त भी काल निश्चित है। करोड़ों की धन राशि भी मृत्यु टाल नहीं सकती।

आया है सो जाएगा, राजा, रङ्क, फकीर।

विश्वतोमुखः धाता - सबका पालन-पोषण करने वाले भी ईश्वर ही हैं। मूल में श्रीभगवान स्वयं हैं। जिस वृक्ष को सीञ्चा नहीं, जिस मछली को दाना प्राप्त नहीं या जिन बच्चों के माता-पिता नहीं, सबका धाता वह ही है।

10.34

मृत्युः(स्) सर्वहरश्चाहम्, उद्भवश्च भविष्यताम्।
कीर्तिः(श्) श्रीर्वाक्च नारीणां(म्), स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा॥10.34॥

सबका हरण करने वाली मृत्यु और भविष्य में उत्पन्न होने वाला मैं हूँ तथा स्त्री-जाति में कीर्ति, श्री, वाक् (वाणी), स्मृति, मेधा, धृति और क्षमा (मैं हूँ)।

विवेचन- GOD - Generator, Operator, Destroyer
श्रीभगवान कहते हैं कि उत्पत्ति का कारण मैं हूँ और सबको नष्ट करने वाला भी मैं ही हूँ।

देवताओं की सात स्त्रियों के नाम श्रीभगवान ने बतलाये।

ये राजा दक्ष की पुत्रियाँ हैं - स्मृति, मेधा, क्षमा, धृति, कीर्ति
ब्रह्माजी की वाक् पुत्री हैं - सरस्वती
भृगु की पुत्री हैं - श्री
श्री का अर्थ लक्ष्मी से जुड़ा है और ऐश्वर्य का प्रतीक है इसलिए हमारे यहाँ नाम के आगे श्री का प्रयोग होता है- श्रीमान, श्रीमति।

चार अन्तः गुण हैं - स्मृति (memory), मेधा (wisdom), धृति (धारणा) और क्षमा (forgiveness)
और तीन बाह्य गुण हैं - श्री (ऐश्वर्य), कीर्ति (प्रसिद्धि) और वाणी।

श्रीभगवान कहते हैं कि इन सात देवताओं की स्त्रियाँ मैं ही हूँ।

10.35

बृहत्साम तथा साम्नां(ङ्),गायत्री छन्दसामहम्।

मासानां(म्) मार्गशीर्षोऽहम्, ऋतूनां(ङ्) कुसुमाकरः॥10.35॥

गायी जाने वाली श्रुतियों में बृहत्साम और सब छन्दों में गायत्री छन्द मैं हूँ। बारह महीनों में मार्गशीर्ष (और) छः ऋतुओं में वसन्त मैं हूँ।

विवेचन- सावित्री देवी की स्तुति में गायत्री मन्त्र पढ़ा जाता है और यह इस संसार को विश्वामित्र मुनि की देन है। विश्वामित्र मुनि ने इस मन्त्र को सिद्ध अर्थात् प्रकट किया।

महाभारत काल में मार्गशीर्ष मास से ही नव वर्ष का आरम्भ होता था और इसी माह में श्रीभगवान के मुखारविन्द से श्रीमद्भगवद्गीता जी प्रस्फुटित हुईं।

10.36

द्यूतं(ञ्) छलयतामस्मि,तेजस्तेजस्विनामहम्।
जयोऽस्मि व्यवसायोऽस्मि, सत्त्वं(म्) सत्त्ववतामहम्॥10.36॥

छल करने वालों में जुआ (और) तेजस्वियों में तेज मैं हूँ। (जीतने वालों की) विजय, (निश्चय करने वालों का) निश्चय (और) सात्त्विक मनुष्यों का सात्त्विक भाव मैं हूँ।

विवेचन- श्रीभगवान ने नकारात्मक या त्याज्य विषयों का भी वर्णन किया क्योंकि शैतान की उत्पत्ति भी यहीं से है।

श्रीभगवान के तमोगुण का प्राकट्य द्यूत में दिखता है। जुआ खेलना तमोगुण का प्रचण्ड प्रतीक है। आत्महत्या करने वालों में, जुआ खेलने वालों की सङ्ख्या सबसे अधिक होती है।

श्रीभगवान तेजस्वियों के तेज में, जीतने वालों की विजय में और सात्त्विक मनुष्यों के सात्त्विक भाव में विद्यमान हैं।

10.37

वृष्णीनां(म्) वासुदेवोऽस्मि, पाण्डवानां(न्) धनञ्जयः।
मुनीनामप्यहं(म्) व्यासः(ख्), कवीनामुशना कविः॥10.37॥

वृष्णि वंशियों में वसुदेव पुत्र श्रीकृष्ण (और) पाण्डवों में अर्जुन मैं हूँ। मुनियों में वेदव्यास (और) कवियों में कवि शुक्राचार्य भी मैं हूँ।

विवेचन - श्रीभगवान कहते हैं कि वृष्णि वंशियों में वे स्वयं विभूति हैं और पाण्डवों में अर्जुन विभूति हैं।

मुनियों में वेदव्यास और कवियों में शुक्राचार्य भी वे स्वयं ही हैं।

संस्कृत भाषा में कवि से तात्पर्य कविता लिखने वाला नहीं, अपितु त्रिकालज्ञ से है, भूत, वर्तमान, भविष्य का ज्ञाता। त्रिकालज्ञ, वेद्विद, शास्त्रज्ञ को कवि कहा गया है।

10.38

दण्डो दमयतामस्मि, नीतिरस्मि जिगीषताम्।
मौनं(ञ्) चैवास्मि गुह्यानां(ञ्), ज्ञानं(ञ्) ज्ञानवतामहम्॥10.38॥

दमन करनेवालोंमें दण्डनीति और विजय चाहनेवालोंमें नीति मैं हूँ। गोपनीय भावोंमें मौन और ज्ञानवानोंमें ज्ञान मैं हूँ।

विवेचन- श्रीभगवान ने किसी बात को गुप्त रखने के लिए मौन धारण करने के लिए कहा, परन्तु हम ने एक नया ढङ्ग चुन लिया है - किसी को बता देंगे और उससे आग्रह करेंगें कि वह आगे किसी को न बताये।

जब बात छुपी नहीं रहती तो हम विश्वासघात का आरोप उस पर लगाते हैं। स्वयं ही रहस्य छुपाया न गया तो फिर किसी और से यह अपेक्षा कैसे?

10.39, 10.40

यच्चापि सर्वभूतानां(म्), बीजं(न्) तदहमर्जुन।
न तदस्ति विना यत्स्यान्, मया भूतं(ञ्) चराचरम्॥10.39॥
नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां(म्), विभूतीनां(म्) परन्तप।
एष तूद्देशतः(फ्) प्रोक्तो,विभूतेर्विस्तरो मया॥10.40॥

और हे अर्जुन! सम्पूर्ण प्राणियों का जो बीज (मूलकारण) है, वह बीज भी मैं ही हूँ; (क्योंकि) वह चर-अचर (कोई) प्राणी नहीं है जो मेरे बिना हो अर्थात् चर-अचर सब कुछ मैं ही हूँ।
हे परंतप अर्जुन ! मेरी दिव्य विभूतियों का अन्त नहीं है। मैंने (तुम्हारे सामने अपनी) विभूतियों का जो विस्तार कहा है, यह तो (केवल) संक्षेप से नामनात्र कहा है।

विवेचन- बीसवें श्लोक से उन्तालीसवें श्लोक तक श्रीभगवान ने बयासी विभूतियाँ बतलाईं हैं, पर ये नाम मात्र हैं क्योंकि श्रीभगवान की विभूतियों का अन्त ही नहीं है। महाभारत के एक लाख श्लोक भी वर्णन करने के लिए कम पड़ जायेंगे।

केवल उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए और समझाने के लिए संक्षेप में कुछ विषय बता दिए हैं। जिन सांसारिक विषयों का हमें ज्ञान है, केवल उन्हीं विभूतियों का वर्णन किया है।

कोटि-कोटि ब्रह्माण्डों में कितने-कितने ब्रह्माजी और न जाने कितने देव तत्त्व होंगें जिनका हमें रत्ती भर ज्ञान नहीं।

10.41

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं(म्), श्रीमदूर्जितमेव वा।
तत्तदेवावगच्छ त्वं(म्), मम तेजोंऽशसम्भवम्॥10.41॥

जो-जो ऐश्वर्ययुक्त, शोभायुक्त और बलयुक्त प्राणी तथा पदार्थ हैं, उस-उसको तुम मेरे ही तेज (योग अर्थात् सामर्थ्य) के अंश से उत्पन्न हुई समझो।

विवेचन- श्रीभगवान कहते हैं कि जो भी शक्तियुक्त, कान्तियुक्त और ऐश्वर्ययुक्त दिखे, वह मेरे तेज के प्रभाव से है। जिसने मेरे सत्त्व को जितना धारण किया, उसमें उतनी ही शक्ति, कान्ति और ऐश्वर्य की वृद्धि हुई।

श्रीभगवान सत्त्व का प्रतीक हैं और जो अपने जीवन में सत्त्व की जितनी वृद्धि करेगा, वह उतना अधिक शक्तिवान, अधिक कान्तिवान और ऐश्वर्यवान होता जायेगा।

10.42

अथवा बहुनैतेन, किं(ञ्) ज्ञातेन तवार्जुन।
विष्टभ्याहमिदं(ङ्) कृत्स्नम्, एकांशेन स्थितो जगत्॥10.42॥

अथवा हे अर्जुन ! तुम्हें इस प्रकार बहुत-सी बातें जानने की क्या आवश्यकता है? (जबकि) मैं (अपने किसी) एक अंश से इस

सम्पूर्ण जगत् को व्याप्त करके स्थित हूँ अर्थात् अनन्त ब्रह्मांड मेरे एक अंश में है।

विवेचन- आभूषण देखने पर सोने पर ध्यान टिका रहे, यह तत्त्व दृष्टि है। श्रीभगवान अर्जुन से कहते हैं कि तुम मुझे क्या जान पाओगे? इतना विस्तृत ब्रह्माण्ड भी मेरा केवल अंश मात्र है, शेष तो तुम्हारी कल्पना से भी परे है।

तिरानवें अरब (billion) light years तक की खोज वैज्ञानिकों ने कर ली है। Hubble's Telescope से कई चित्र प्राप्त हो गए हैं पर वे भी मेरे तेज का छोटा सा अंश मात्र हैं।

विभूति बतलाने का प्रयोजन श्रीभगवान ने केवल व्यवहार दृष्टि से किया, तत्त्व दृष्टि में उसका कोई महत्त्व नहीं है।

इसके उपरान्त विवेचन समाप्त हुआ और प्रश्न-उत्तर प्रारम्भ हुए।

प्रश्नोत्तर

प्रश्नकर्ता - पद्मिनी दीदी
प्रश्न- जब हम कुछ भी पढ़ते हैं या कोई कथा आदि सुनते हैं तो मन में बहुत से तर्क आते हैं। क्या इस प्रकार के तर्क-वितर्क मन में होना सही है या गलत है? क्या करें कि मन में इस तरीके के विचार न आएँ?
उत्तर - आरम्भ में जब हम कुछ पढ़ते हैं तो ऐसे ही होता है। परन्तु ऐसे तर्क करते ही नहीं रहना है हमें यह सोचना चाहिए कि ये सारे प्रश्न बाल बुद्धि वाले प्रश्न हैं।

यह सब कुछ हमें आध्यात्मिक उन्नति के लिए बताया जा रहा है। इसे शास्त्रों में बुद्धि विलास कहा है। यह हमारी बुद्धि का विलास है। जब हम सांसारिक विलास को छोड़कर बुद्धि के विलास की ओर बढ़ते हैं तो हमारी आध्यात्मिक उन्नति होती है। हम जो भी तर्क-वितर्क करते हैं, उस से हमारे आध्यात्म का समाधान नहीं होता।

यदि आप कटोरी में समुद्र को भरने का प्रयास करेंगे तो वह उसमें कैसे आएगा। तर्क और प्रश्न करना कटोरी में समुद्र भरने का प्रयास करने के समान है। किसी प्रश्न के समाधान से किसी महापुरुष को कोई उपलब्धि हुई हो, ऐसा कभी नहीं सुना है? जब अपनी बुद्धि को परमात्मा में अर्पण कर देंगे तभी उपलब्धि होगी। बुद्धि रूपी कटोरी को जब समुद्र में डुबो देंगे तभी यह सम्भव है। जब तक यह कटोरी समुद्र से बाहर है उसमें समुद्र नहीं लाया जा सकता। अपनी बुद्धि को ईश्वर में अर्पण करना पड़ेगा, तभी आध्यात्मिक उन्नति होगी। इसके अलावा कोई उपाय नहीं है।

श्रीभगवान ने कहा है, अपने मन और बुद्धि को मुझ में अर्पण कर दो।

मय्यर्पितमनोबुद्धिः(र्), मामेवैष्यस्यसंशयम्॥८.७॥

जब तक बुद्धि में ममत्व है, यह भाव है कि यह मेरी बुद्धि है; तब तक ज्ञान की प्राप्ति नहीं होगी। जब यह भाव आ जाएगा कि मैं स्वयं को समझाना चाह रहा हूँ, तब सब समझ में आने लगेगा और तर्क- वितर्क भी दूर हो जाएँगे। अपने आप को पूर्ण रूप से परमात्मा में अर्पित करने के बिना यह सम्भव नहीं है। जब यह समझेंगे कि परमात्मा हमारे भीतर बैठा हुआ है, तब सब संशय दूर हो जाएँगे।

यह रसगुल्ले की बात करने के समान है। जब तक उसे चखा नहीं, तब तक रसगुल्ले का स्वाद नहीं आ सकता। तत्त्व ज्ञान प्राप्त करने के लिए बहुत मेहनत करनी पड़ती है और पूर्ण समर्पण करना पड़ता है।

प्रश्नकर्ता- हनुमान प्रसाद भैया
प्रश्न - आपने जो बत्तीसवाँ श्लोक बताया, उसे एक बार फिर से समझा दीजिए, इसमें श्रीभगवान सृष्टि के विस्तार के लिए क्या कह रहे हैं?

उत्तर - बत्तीसवाँ श्लोक है :

सर्गाणामादिरन्तश्च, मध्यं(ञ्) चैवाहमर्जुन।
अध्यात्मविद्या विद्यानां(व्ँ) वादः(फ्) प्रवदतामहम्॥१०.३२॥

श्रीभगवान कह रहे हैं कि सृष्टि का आदि, मध्य और अन्त मैं ही हूँ, पर जब हम यह मानते हैं कि सृष्टि अनन्त है तो मन में यह बात आ सकती है कि उसका आदि और अन्त कैसे हो सकता है?

यह ठीक है कि ब्रह्माण्ड बहुत बड़ा है। फिर भी ब्रह्माण्ड का प्रारम्भ और अन्त परमात्मा ही हैं। इसी को बताने के लिये विवेचन के समय सारी बातें बताई गई हैं। ब्रह्माण्ड का निर्माण और विनाश हर क्षण हो रहा है। करोड़ों-करोड़ों ब्रह्माण्ड बन रहे हैं और करोड़ों-करोड़ों नष्ट हो रहे हैं। यह एक सतत प्रक्रिया है। It is a constant process happening around. हम जिस ब्रह्माण्ड में हैं, उसकी भी एक निश्चित आयु है। एक समय के बाद यह भी समाप्त हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता- बजरंग भैया
प्रश्न - मन में जो डर घबराहट और बेचैनी रहती है उसको कैसे समाप्त करें?
उत्तर - जितना श्रीभगवान में आश्रय बढ़ेगा, उतना ही डर और घबराहट दूर हो जाएगी। श्रीभगवान का आश्रय लेने से फियर ऑफ़ अननोन (**Fear of unknown)** खत्म हो जाता है। हमारे मन में डर और घबराहट का विशेष कारण होता है **योगक्षेमम्।** मेरे पास जो नहीं है, वह मिल जाए और जो है, वह चला न जाए। इसका विशेष कारण यही है कि हम यह मान कर बैठे हैं कि जो मेरे पास है वह मेरा ही है, जबकि संसार में कुछ भी नित्य नहीं है। कोई भी वस्तु हमेशा रहने वाली नहीं है। जब मैं ही सदा नहीं रहने वाला तो फिर और किसी बात की चिन्ता नहीं करनी चाहिए। यह सब कुछ हमेशा मेरे पास रहेगा, यह सोचना बहुत ही अव्यावहारिक बात है। जितना-जितना ईश्वर में समर्पण बढ़ेगा, यह भाव दूर हो जाएगा। किसी वस्तु के आने-जाने या मेरे पास रहने से फिर मुझे कोई फर्क नहीं पड़ेगा।

होई है वही जो राम रचि राखा।

जब बुद्धि में यह बात बैठ जाएगी, फिर किसी चीज को खोने का डर नहीं लगेगा और मन से डर घबराहट और बेचैनी दूर हो जाएगी। न धन को खोने का, न व्यक्ति को खोने का, न पद को खोने का और न ही प्रसिद्धि को खोने का। जब कोई डर ही नहीं रहेगा तो फिर मन शान्त हो जाएगा।
हर समय यह सोचना कि मैं अभी आनन्द में रह रहा हूँ, यह आनन्द मुझसे दूर न हो जाए, इस भाव को हटाना होगा।

कोई व्यक्ति या कोई चीज मुझे मिल जाए या मेरे पास से चली जाए, तब भी मेरी मौज ऐसे ही रहने वाली है। जब अपने मन को ऐसा बना लेंगे तब फिर कोई घबराहट नहीं होगी। जितना श्रीभगवान पर विश्वास दृढ़ होता जाएगा, उतने ही आप फिर मौज में रहेंगे।

जितना संसार का आश्रय करेंगे, उतना डर बढ़ेगा। जितना श्रीभगवान का आश्रय करेंगे तो सब डर और घबराहट दूर हो जाएगा।

इसका प्रमाण यह है कि यदि जीवन में चिन्ता कम हो रही है तो इसका अर्थ यह है कि श्रीभगवान का आश्रय बढ़ गया है। जितनी चिन्ता अधिक है, समझ जाओ श्रीभगवान का आश्रय उतना ही कम ले रहे हो।
श्रीभगवान में दृढ़ विश्वास रखोगे तो अपने आप ही डर, घबराहट और बेचैनी से मुक्ति मिल जाएगी।

प्रश्नकर्ता- बजरंग भैया
प्रश्न - श्रीभगवान ने अर्जुन को विश्व रूप के दर्शन भी करवा दिए। सभी पाण्डव श्रीभगवान को बहुत प्रिय थे, फिर भी पाण्डवों को स्वर्ग ही मिला, मोक्ष क्यों नहीं मिला?
उत्तर - श्रीभगवान ने कहा है-

"यतन्तो योगिनश्चैनं(म्), पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम्।
यतन्तोऽप्यकृतात्मानो, नैनं(म्) पश्यन्त्यचेतसः॥१५.११॥"

मैं तुम्हें यह सब कुछ ज्ञान दिखा दूँगा, तब भी कुछ नहीं होगा। इस अन्तःकरण को उस सर्वश्रेष्ठ स्तर पर ले जाकर शुद्ध करना पड़ेगा। अर्जुन की कामनाएँ अभी समाप्त नहीं हुई हैं। जब तक हृदय में कामनाएँ हैं तब तक हृदय में श्रीभगवान नहीं आते। चाहे आपकी श्रीभगवान से मित्रता हो गई हो, तब भी नहीं। मोक्ष के लिए अलग से प्रयास करना पड़ेगा। स्वर्ग प्राप्ति कोई भी कर सकता है। मोक्ष प्राप्त करना कठिन है।

प्रश्नकर्ता- रोहिणी दीदी
प्रश्न- यह हम सभी जानते हैं कि हमें सत्य बोलना चाहिए, परन्तु कभी किसी प्रसङ्ग में यदि झूठ बोलना पड़ जाए तो क्या करना चाहिए?
उत्तर - झूठ बोलने में तो हमेशा ही दोष है।

युधिष्ठिर महाराज ने किसी कारण से झूठ बोला, फिर भी उन्हें नर्क का दर्शन करके जाना पड़ा। युधिष्ठिर महाराज के पास बहुत बड़ा कारण था। उन्हें धर्म युद्ध जीतना था, द्रोणाचार्य को मरवाना था। उन्होंने कहा-

अश्वत्थामा हतो नरो वा कुंजरो' का मतलब है, 'अश्वत्थामा मारा गया, लेकिन हाथी'।

यह वाक्य महाभारत के युद्ध में धर्मराज युधिष्ठिर ने गुरु द्रोणाचार्य से कहा था। उन्होंने सच बोला लेकिन आधा सच छुपा कर बोला। उनकी (इंटेंशन) मन्तव्य सही नहीं था। उन्होंने कुंजरो शब्द को बहुत धीमे से कहा इसीलिए उन्हें नर्क के दर्शन करने पड़े। जहाँ पर सत्य बोलने से कष्ट हो, तकलीफ हो, वहाँ पर मौन रहना चाहिए।

प्रश्नकर्ता- लता दीदी
प्रश्न- हमारा कान्हा जी से अटूट प्रेम है, परन्तु फिर भी मन में अशुद्ध विचार आ जाते हैं ऐसा क्यों है?
उत्तर - हमारे अनेक जन्मों के संस्कार के कारण यह होता है। यह केवल आपके साथ ही नहीं होता यह सब के साथ होता है।

इसके दो कारण हैं -हमारे पूर्व जन्म के संस्कार और हमारी अभी की वासनाएँ और कामनाएँ। इन दोनों पर विजय प्राप्त करनी पड़ेगी। जब मन में ऐसे विचार आए तो उसके लिए मन में क्षोभ होना अच्छी बात है।
यदि ऐसे में मन विचलित होता है तो यह अच्छा है। फिर इसके कारण को ढूँढना चाहिए कि मेरी वासना और कामना कहाँ पर थी? कहाँ पर मेरा राग-द्वेष था? जिसके कारण इस तरह के विचार का मेरे मन में निर्माण हुआ।

उस वासना, कामना और दोष पर विजय प्राप्त करनी होगी। यदि इस पर विजय प्राप्त हो गई तो ये बुरी भावनाएँ हृदय से दूर हो सकती हैं। बड़े-बड़े साधु सन्तों के जीवन में भी इस प्रकार की समस्या होती है। वे लोग श्रीभगवान के सामने रोते हैं कि यह दोष हमारे मन में क्यों रह गया है। ये पूर्व जन्म के संस्कार हैं। ये दूर करना बहुत कठिन हैं। ईश्वर के सामने रोने से मन साफ हो जाता है।

प्रश्नकर्ता- राजपाल भैया
प्रश्न -मेरे परिवार में दादाजी के भाई के पोते की मृत्यु हो गई है। क्या मुझे सूतक लगता है? मुझे क्या इस समय पूजा पाठ नहीं करनी चाहिए?
क्या वह मेरा ही परिवार समझा जाएगा?
उत्तर - जी हाँ, वह आपका ही परिवार समझा जाएगा। तीन पीढ़ी तक के परिवार को पूजा-पाठ नहीं करनी चाहिए। मन्दिर भी नहीं जाना चाहिए।
अपने घर के मन्दिर में दीया जरूर जलाएँ। आपकी कोई कन्या हो तो वह जला दे या कोई पास पड़ोसी या सम्पर्क वाला हो तो उससे जलवा लें।
इन दिनों मन्दिर में रखे हुए धर्म ग्रन्थ का पाठ नहीं करना है। यदि आप गीता पढ़ रहे हैं तो उसे पढ़ते रहें, उसमें कोई दोष नहीं

है। माला जप करने में भी, यदि मन्त्र का जाप करते हैं तो वह नहीं करना चाहिए। यदि नाम जप कर रहे हैं तो उसे करते रहने में कोई दोष नहीं है।

प्रश्नकर्ता - मंजूषा दीदी
प्रश्न - मैं स्वयं गीता परिवार से जुड़ी हुई हूँ। मेरे कहने से मेरी सहेली भी नहीं जुड़ी है। जब हम परिवार वालों को बताते हैं तो मेरे पति या और लोग भी इसको नहीं मानते। उन्हें गीताजी के साथ जोड़ने के लिए मुझे क्या करना चाहिए?
उत्तर -प्रत्येक मनुष्य को श्रीभगवान ने अपनी बुद्धि दी है और अपना उद्धार करने का साधन दिया है। केवल अपने जीवन का कल्याण करने का और उद्धार करने का ठेका श्रीभगवान ने हमें दिया है। हम बच्चों के पालक हैं। हम उनके स्वामी नहीं हैं। अपने बच्चों को अच्छे संस्कार देना हमारा कर्त्तव्य है। वे क्या करेंगे? कैसे करेंगे? इस पर हमारा अधिकार नहीं है। यह स्वतन्त्रता श्रीभगवान ने उनको दी है और हमें भी इसका मान रखना चाहिए। कई बार अभी आपके कहने से वे पाठ नहीं करते हैं, पर बाद में करने लगते हैं। समय आने पर बुद्धि खुलती है। इसको धैर्य से देखना चाहिए और अपनी मित्रता बना कर रखनी चाहिए।

जो गीता जी के मार्ग पर नहीं चलता, वह मेरा दुश्मन है, मेरा मित्र नहीं है, ऐसा विचार मन में नहीं लाना है। ऐसे व्यक्ति के प्रति भी मेरा उतना ही प्रेम होना चाहिए। वह कोई बुरा या दुष्ट व्यक्ति नहीं है। ऐसी भावना अपने मन से निकाल दें। उनकी बुद्धि खराब नहीं है। वे अपने विवेक से चल रहे हैं। आप उसकी चिन्ता मत करो। अपनी भक्ति पर ध्यान दो।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां(म्) योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे विभूतियोगो नाम दशमोऽध्यायः ॥

इस प्रकार ॐ तत् सत् - इन भगवन्नामों के उच्चारणपूर्वक ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्रीकृष्णार्जुनसंवाद में 'विभूतियोग' नामक दसवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
Let's come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends &

acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||